IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429
Volume 6, Issue 7, June 2026
Impact Factor: 8.2

हिंदी साहित्य में आदिवासी स्वर

डॉ.बलवंत जेऊरकर
विलिंग्डन कॉलेज, सांगली
balwantjeurkar75@gmail.com

शोध सारांश : *हिंदी साहित्य में दलित विमर्श, किसान विमर्श, किन्नर विमर्श आदि विमर्शों की तरह आदिवासी विमर्श आज एक महत्वपूर्ण विमर्श के रूप में अपनी उपस्थिति को रेखांकित करता हुआ परिलक्षित हो रहा है। आदिवासी साहित्य को महत्वपूर्ण रचना-विधान के रूप में भी महत्व्पूर्ण मन गया है। आदिवासियों की पीड़ा अन्य पीड़ित जनों से अलग है। जंगलों के रूप में उनके घर उनसे छीन लिए गए हैं। विकास के नाम पर उजाड़ होते जंगलों में आदिवासी बेघर हैं। लोकगीत गाता, अद्भूत कलाकारी को अभिव्यक्त करता आदिवासी पहले मासूम होता था परन्तु आज वह अपनी खोयी पहचान को ढूंढ रहा है। अस्मितामूलक विमर्श के रूप में आदिवासी विमर्श आदिवासियों पर हुए अत्याचार और अधिकार की मांग करता हुआ संघर्ष करता हुआ परिलक्षित होता है।*
साहित्य हमेशा से ही पीड़ा भरी वाणी को मुखर बनाने और परिरोध व्यक्त करने का सशक्त माध्यम रही है। आदिवासी साहित्य पढ़ने के कारण अलक्षित, सैंकड़ों वर्षों से अँधेरे में गुम, अपनी पहचान के लिए छटपटाते आदिवासियों के दर्दनाक जीवन-जगत से परिचय मिलता है।

बीज शब्द – आदिवासी विमर्श, उलगुलान, जंगल, भूमिपुत्र, संघर्ष।

प्रस्तावना

शोधलेख विश्लेषण –

आदिवासियों की अस्मिता की खोज के लिए लड़ते आदिवासी साहित्य को प्रथम पांक्तेय साहित्य के रूप में विराजमान है ; इसका प्रमाण ही है कि युवा आदिवासी कवि अनुज लुगुन 'बाघ और सुगना मुंडा की बेटी' संग्रह के लिए और पिछले वर्ष पार्वती टिर्की के 'फिर उगना' कविता संकलनों के लिए साहित्य अकादेमी के युवा पुरस्कार से पुरस्कृत किया गया है। आदिवासी साहित्य ने आज पाठकों और आलोचकों का ध्यान बरबस आकर्षित कर लिया है। पुरस्कारों के झगमगाते आलोक के पीछे आदिवासियों की पीड़ा का अँधेरा कई गुना गहरा है। आदिवासी साहित्यकार कविता को तीर बनाकर इस अँधेरे को भेदते हैं। ग्रेस कुजूर के शब्दों में –

'ईंटों के भट्ठों में / सीज गई जिन्दगी / रोटी की खोज में कहाँ
नहीं भागी/ बाहें हो गई कमान सब उंगलियाँ तीर/
देखना बाकी है कलम को तीर होने दो!'[1]

विकास के नाम पर आदिवासियों के जंगल काटकर,उन्हें जंगलों से खदेडकर, अपनी परंपरा के विपरीत ईंटों के भट्ठों में मजदूरी करना आज के आदिवासियों का अभिशाप है। उपरोक्त काव्यांश में एक और गहरी पीड़ा है तो दूसरी और 'कलम को तीर होने दो' का लगभग नारा और उम्मीद दिखाई देती है।
रमणिका गुप्ता के शब्दों में, 'लगभग सवा-डेढ़ वर्ष पहले आदिवासी लोकसाहित्य की वाचिक-यात्रा लिपिबद्ध होने की प्रक्रिया से शुरू होकर समकालीन साहित्य के सृजन की डगर पर चल पडी इस प्रकार अपने लोक-साहित्य की परंपरा को स्रोत बनाते हुए आदिवासियों ने समकालीन साहित्य की शुरुआत की थी। इसके पीछे उनके पांच हजार वर्षों से संजोया विपुल धैर्य और साहस है और है लोकगीतों. शौर्य गाथाओं, लोक कथाओं , अनुष्ठानों और परम्पराओं का पुरकस खजाना।' [2]

ISSN: 2581-9429 Volume 6, Issue 7, June 2026 Impact Factor: 8.2

आदिवासी साहित्य की एक अनोखी विशेषता यह है कि यह साहित्य परिनिष्ठित हिन्दी भाषा के साथ अनेक बोलियों में लिखा जा चुका है और लिखा जा रहा है। इन्हीं बोलियों और भाषा से आदिवासियों का दुःख अभिव्यक्त होता है। कवि सहदेव सोरी अपनी कविता में आदिवासी का रेखाचित्र कुछ इस तरह उकेरते हैं-

‘प्रकृति की गोद में बसा/ वह आदमी कला मटमैला/
बियाबान जंगलों में/ पहाड़ की तराइयों में/
सरिता की धाराओं में/ तय कर रहा है।
जीवन का सफ़र / वह आदमी होकर भी भूखा-नंगा-शोषित/
बना लेता है/घरौंदे की तरह सुख की आलिशान इमारत’ [3]

आदिवासी कवि जुझारू है। वह त्रासदियों के सामने झुकता नहीं। ‘आदिवासी धरती को बचानेवाले सिपाही हैं। जंगलों के रखवाले हैं और पहाड़ों के पहरुए.......आज तक आदिवासी अपने शोषण का मूकदर्शक बना रहा। महाजन,ठेकेदार,दलाल,दिकू,राजा, नवाब या मैदानी लोग उसके जंगलों-जमीनों और उसकी औरतों को लूटते और रोजगार छीनते रहे। आजादी के बाद विकास की कीमत आदिवासी को विस्थापन और पलायन से अदा करनी पडी। उसके खेत खदान बन गए,जंगल लकड़ी की टालें या कुर्सी,मेज और फर्नीचर। गाछ बन गए खूंटे और बल्ले या रेल की पटरिया। झारखण्ड जे जंगलों में आम,कटहल,गंभर,शीशम व् सुखा के बदले युकलिप्टस, जो धरती से पानी सोख लेता है , उगाया जाने लगा तो आदिवासी का मन बौखला गया। भीषण संघर्ष हुआ, झारखण्ड के जंगलों में गोलियां चलीं, कई लोग मारे गए, कई लोग आज भी मुकदमे में फंसे हैं । इन्हीं लुप्त होते जंगलों और नष्ट होती वनसंपदा और जडी-बूटियों की खोज में है। [4] आदिवासी इतने बडे षडयंत्र के विरोध में ‘उलगुलान’ (विद्रोह) करते हैं। ‘उलगुलान’ में आदिवासी स्त्री की साझेदारी बराबर की रही है। अनुज लुगुन इसे इसप्रकार व्यक्त करते हैं –

‘वे उतनी ही लड़ाकू थी/जितना कि उनका सेनापति
वे अपनी खूबसूरती से कहीं/ ज्यादा खतरनाक थीं/
अपने जुड़े में उन्होंने सरहुल और ईचा:बा की जगह /
साहस / का फूल खोंसा था/ उम्मीद को उन्होंने/
कानों में बालियों की तरह पिरोया था/ हक की लड़ाई में/
उन्होंने बोया आत्मसम्मान का बीज/ उलगुलान की औरतें /
धरती से प्यार करनेवालों के लिए/ जितनी थीं खूबसूरत/
उतनी ही खतरनाक थीं / धरती के दुश्मनों के लिए।‘ [5]

इस कविता के पार्श्व में मुगलों को तीन बार परास्त करनेवाली आदिवासी वीरांगना ‘सिनगी दई’ का विशेष सन्दर्भ लक्षित होता है। आदिवासियों के हमदर्द बनकर आये लोग भी उनका लाभ उठाते हैं। आदिवासियों के उलगुलान अर्थात् क्रान्ति को प्रतिरोध माना जाता है।कवयित्री जसिंता केरकेट्टा इस छद्म को पहचान लेती है –

‘उधर ऊंची कीमत पर /शर बाजार को बंधक बनता है/
इधर सस्ते में हर गाँव को / बनिया- साहूकार बंधक बनता है/
बंधक गाँव जब आवाज उठाता है /
तो यह देश समझता है/
जंगल सिर्फ प्रतिरोध करता है ’ [6]

DOI: 10.48175/IJARSCT-37506

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429
Volume 6, Issue 7, June 2026
Impact Factor: 8.2

इक्कीसवी सदी के प्रमुख आदिवासी कवि अनुज लुगुन अपने काव्य लेखन की भूमिका बारे में लिखते हैं- ' जब मैं कविता लिखता हूं तो प्राथमिक रूप से आदिवासी वाचिकता मेरे जहन में तैरती रहती है। पुरखों की बनाई दुनिया,उनका संघर्ष,उनके गणतांत्रिक मूल्य, इतिहास और उनकी स्मृतियाँ मेरे वर्तमान में उपस्थित रहती हैं। वे आज की पूंजीवादी दुनिया की जटिलताओं को देखकर मुझसे संवाद करते हैं।.... मैं अपनी कविताओं को अपनी वस्तुगत परिस्थितियों से मुक्त नहीं मनाता हूँ, न ही उनसे निरपेक्ष चाहता हूँ। मैं चाहता हूँ कविता उसमें गहराई से धंसे और वर्तमान हिंसक (दिकु) सभ्यता और संस्कृति के वर्चस्व की परतों की शिनाख्त करे। कविता मुझे और अधिक संघर्ष एवं आत्म-संघर्ष की और ले चले।' [7] यहाँ अनुज आदिवासियों की त्रासदी और अस्मिता दोनों की वाणी प्रकट करने के लिए प्रतिबद्ध दिखाई देते हैं। 'पत्थलगडी' अनुज लुगुन की बहुचर्चित कविता है। यह कविता समग्र आदिवासी कविता का प्रतिनिधित्व करती है। यह बात बहुत पुराने ज़माने से चलती आ रही है कि सरकार आदिवासियों; परिणामस्वरूप आदिवासियों के अस्तित्व पर हमला होता है। पत्थर आदिवासियों के पहचान का प्रतीक हैं । पत्थरों को गाड़ना आदिवासियों की विरासत है, इतिहास ,परंपरागत चीजों का लेखाजोखा है । परन्तु सरकारें पत्थरों पर निषेध लगाकर ही उनकी जमीन पर सेंध लगती हैं-

इन पत्थरों पर जीवित हैं/ हमारी सैंकड़ों पुश्तों की विरासत/
लेकिन सरकारी पट्टों पर/ इनका कुछ पता नहीं है।/
ये हमारे घर हैं। और इस तरह हम बेघर हैं /
हम बेघर सरकारी पट्टों पर /
हमारी विरासत पर दखल हुई सरकारी पट्टों की
भाषा का यह फेर पुराना है/
सरकार आदिवासियों की भाषा नहीं समझती है/
वह उनपर अपनी भाषा थोपती है/
आदिवासी पत्थलगडी करते हैं /
और सरकार को लगता है कि वे बगावत कर रहे हैं।[8]

इसी अनुज लुगुन की कविता ' बाघ और सुगना मुंडा की बेटी' आदिवासी कविता का मील का पत्थर है, जो आदिवासी स्त्री के सशक्तीकरण की प्रतिष्ठा करती है। आदिवासियों के भगवन क्रांतिकारी बिरसा मुंडा की बहन बिरसी के काल्पनिक पात्र की योजना करते हुए उसको इस कविता के केंद्र में रखा गया है । इन अर्थों में आदिवासीय स्त्रियाँ और पुरुष में लैंगिकता के भेद के विरोध के बरक्स समानता के यथार्थता को वरीयता दी है। आदिवासी अस्मिता की लड़ाई में आदिवासी महिलाएं पुरुषों से पीछे कभी नहीं रही हैं।

'सुगना मुंडा की बेटियां घूंघट के नीचे
सहम कर नहीं जीती
वे तो फरसे और धनुष के साथ बलिदानी हैं
सुगना मुंडा अपनी बेटियों को बेटों से अलग नहीं करता है' [9]

जल,जंगल और जमीन आदिवासियों के जीवन अस्तित्व हैं ।आज इन तीनों का शोषण हो रहा है। इनके बिना उनका जीवन समस्याओं से घिरा हुआ है। अस्तित्व के ये तीन तत्त्व जीविका के साथ उनका भाव जगत अनिवार्य हैं। यह तीनों तत्त्व अस्मिता का साकार रूप हैं। इन्हीं को प्राप्त करने के लिए आदिवासी और आदिवासी साहित्यकार कटिबद्ध हैं। जुझारूपन और संघर्ष के कारण भोगे हुए यथार्थ की नुकीली आदिवासी कविता हिंदी की मुख्यधारा की कविता में अग्रणी है।

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429
Volume 6, Issue 7, June 2026
Impact Factor: 8.2

संदर्भ :

1.वागर्थ (पत्रिका)-फरवरी 2015 संपा. एकांत श्रीवास्तव, कुसुम खेमानी पृ.58
2.वही पृ. 55
3.आदिवासी स्वर और नई शताब्दी-रमणिका गुप्ता वाणी प्रकाशन नई दिल्ली पृ.56
4.वागर्थ-(पत्रिका) फरवरी 2015 संपा. एकांत श्रीवास्तव, कुसुम खेमानी पृ.58
5. वही- पृ.5
6. बनास जन (पत्रिका) अंक 73 मई 2024 संपा. पल्लव पृ 45
7. समय के साखी (पत्रिका)- मई-जून 2023 अतिथि संपादक राजेश जोशी पृ.10
8. वही- पृ.15
9. परिवर्तन- (पत्रिका)- संपादक डॉ.महेश सिंह, अतिथि संपादक- डॉ. अनुज कुमार पृ. 55

Copyright to IJARSCT
www.ijarsct.co.in
DOI: 10.48175/IJARSCT-37506